उपनिवेशवाद : ढाई सौ वर्षों का इतिहास

उपनिवेशवाद परिणामत: साम्राज्यवाद की कहानी पिछले लगभग 500 वर्षों की है। 1490 से 1500 के बीच कोलंबस अमेरिका पहुंचा, वास्को-डि-गामा भारत आया।

वैसे तो 1600 वर्ष पूर्व भी ईसाई मत का प्रवेश दक्षिण-पश्चिम तट पर हुआ था। यहूदी भी पश्चिमी तट पर आये। भारत के उत्तर पूर्व तक भी गये। केरल के राजा ने व्यापारिक कारणों से कुछ जहाजी लोगों को इस्लामी मतावलंबी भी बनाया। पर वह सब तो उपनिवेशवाद की परिधि में नहीं आता।

संत, सैलानी, व्यापारी, यायावर तो सर्वत्र घूमते ही रहे हैं। पर पिछले 500 वर्ष के उपनिवेशवाद ने अमानवीय अत्याचार ढाये। स्थानिक लोगों पर जुल्म ढाये। सीडिंग सरीखी घृणित कारस्तानी की। शोषण और लूट मे लिप्त हुई। स्थानिक आबादी का शिकार किया। सामान्य जन को गुलाम बनाया। लगभग आधा यूरोप उठकर दूसरे देशों में कब्जा करने जा पहुंचा। इसमे यूरोप के राजनेता, धार्मिक क्षेत्र के पोप सरीखे गणमान्य लोगों की भी सहमति थी। उत्तर-दक्षिण अमेरिका की स्थानीय आबादी सिमटकर कुछ लाखों तक रह गई। एक अध्ययन के अनुसार 9 करोड़ से ज्यादा स्थानिक लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा।

लूट मची। यूरोप की 200 साल पूर्व की भौतिक उन्नति का आधार ही उपनिवेशों से मिली लूट का माल है। उससे शिकारी और घुमंतू कबीलाई समाज संपन्न होता गया। उन कबीलाई समूहों की आपसी छीना-झपटी को रोकने के उद्देश्य से 1648 मे जर्मनी स्थित वेस्टफालिया मे बैठक पुरे साल चली। उसमें 150 समूहों ने कई महीने माथापच्ची की। अंतत: सार्वभौमिकता और किसी के आतंरिक मामलों मे हस्तक्षेप न करने के विषय मे समझौता हुआ।

बाद मे औद्योगिक क्रान्ति मे उपनिवेशी लूट से प्राप्त कच्चा माल मिला। श्रम को और उत्पादक बनाने और अपनी सैन्यशक्ति और ज्यादा मारक बनाने के लिये टेक्नोलॉजी का उपयोग हुआ। इसी मे से Military Cantonement की जगह Civil Lines या Civil Engg आदि चलन मे आये। धनशक्ति और सैन्यशक्ति के योग से उपनिवेश यूरोप के अलग-अलग समूहों के अधीनस्थ होते गये। उपनिवेशवाद अब साम्राज्यवाद में बदलता गया।

अमेरिका बसे इन यूरोपीय लोगों ने यूरोप से संबंध तोड़कर अपनी सत्ता बना ली। उस तुलना में स्पैनिश या पुर्तगाली उपनिवेश के लोगों ने पितृदेश से संबंध गहरे बनाये भी रखा। पुर्तगालियों और स्पैनिश लोगों ने दक्षिण अमेरिका, अफ्रिका, पूर्व एशिया का रुख किया।

टेक्नोलॉजी का चौतरफा बढाव एवं विविधीकरण हुआ। अर्थव्यवस्था ने समाज-संरचना और राज्य-व्यवस्था पर गहरा प्रभाव डाला। इस प्रभाव का विश्वव्यापी विस्तार हुआ। प्रोटेस्टेन्टिज्म जनित विचार में मनुष्य ही सर्वप्रमुख है। शेष सृष्टि मनुष्य के लिये हैं। मनुष्य प्रकृति का अंग नही प्रकृति का विज्ञेता है। प्रकृति उसके लिये निर्मित है। साथ ही भौतिक ऐंद्रिक सुख ही सबकुछ है। परमार्थ कुछ नही

है, शौकिया शगल हो सकती है। उपनिवेशवाद एवं पशुवत् सुखोपयोग ऐसे दोनों पहलू पिछले 500 वर्षों के समाज संचालन की धुरी बन गये। उपनिवेशवाद से लेकर हथियारवाद, साम्राज्यवाद, सरकारवाद और बाजारवाद का 500 वर्षों का कालखंड बीता है।

दुनिया मे तथाकथित विकास(पशुवत् उपभोग) की अंधी दौड़ ने हम सबको कोरोना काल तक पहुँचाया है। साथ ही विषमता हर तरह की बढ़ी है। प्रकृति विध्वंस अभूतपूर्व है। कमजोर वर्ग पर भार पड़ रही है। कमजोर लोग खारिज किये जा रहे है Creative Destruction तो Development के लिये जरुरी ही है ऐसा कहा जाने लगा है। पिछले 300 वर्ष की स्थापनाओं और ढांचों पर सवालिया निशान लग गया है। अधिष्ठान-परिवर्तन Paradigm Shift की जरुरत महसूस की जा रही है। एक विद्वान लेखक, फ्रैंक महोदय ने पांच हजार साल बनाम 500 साल विषयक पुस्तक मे प्रतिपादित किया है कि मानव समाज में पिछले 5000 वर्षों मे जितने बदलाव विश्व में आये उससे ज्यादा व्यापक और ज्यादा गहरा बदलाव पिछले 500 वर्षों में आया है।

परिवर्तन की गति पिछले 500 वर्षों मे जितनी थी उससे कहीं बहुत ज्यादा बदलाव पिछले 100 वर्षों मे हुआ है। संचार, परिवहन, सूचना तकनीक, कन्वर्जेन्स, इंटरनेट और न जाने क्या ? क्या ? तकनीकी ने दिन-चर्या, आहार-चर्या, ऋतु-चर्या को उखाड़- पछाड़कर रख दिया है। विश्व को एकरूपीकरण के रास्ते पर ढकेला जा रहा है। व्यापार, आर्थिक संरचना, विदेश नीति, राजनीति, संवाद माध्यम आदि सभी मे भारी उलटफेर नजर आते हैं। वेस्टफालिया कन्वेंशन के बाद फ्रांस मे राज्यक्रान्ति 1789 मे हुई। स्वतंत्रता, समानता, बंधुता का सिद्धांत प्रतिपादित हुआ। बंधुता का बलिदान हो गया। खोखली बातें विश्व कल्याण की परन्तु दो या दो विश्व युद्धों से गुजरना पड़ा दुनिया को। 1917 रूस की राज्य क्रान्ति हुई। 1949 में चीन मे माओत्से तुंग सत्तासीन हुए। ये दोनों सरकारवाद के प्रतिनिधि हुए। यूरोप के कई देश(अमेरिका समेत) बाजारवाद के पक्ष मे खड़े हुए। पर दोनों किस्म के लोग नव उपनिवेशवाद के पुरोधा मात्र है, विश्व कल्याण के पुरस्कर्ता नहीं है। दुनिया के खेल को हमने अब तक ऐसा ही समझा है। उपनिवेशवाद, हथियारवाद, सरकारवाद और बाजारवाद, कोरोना काल तक की कथा यात्रा को भारतीय संदर्भ मे भी समझना चाहिये।

कहने को तो 500 वर्ष की कथा है पर पिछले 200 वर्ष भारत पर ज्यादा परिणामकारी रहे है। 1600 से यूरोप के देशों की ओर से ईस्ट इन्डिया कम्पनियाँ बनने लगी और उनके आपसी द्वंद्व चलते गये। उस स्पर्धा मे इंग्लैंड को सफलता मिली, डच, पुर्तगाली, फ्रेंच उपनिवेशवादियों को टिकने न देने में। लगभग 150 वर्ष लगे, इस सारी प्रक्रिया में। इस लूट के लिये आवश्यक रणनीति के तहत छल, ठगी, व्यापार और कतिपय अनैतिक राजनैतिक हस्तक्षेप किया गया। भारत की आत्मविस्मृति, सद्गुण विकृति ही इस पटकथा की चालक शक्ति है। भारतीय तब तक भी बेखबर हाथी की चाल चलता रहा। अधिकांश समय(शिवाजी जैसे कुछ काल को छोड़कर) क्षुद्र स्वार्थों के टकराव को साधने मे ही व्यस्त रहे प्रभावी शक्तिशाली लोग। प्रतिरोध, प्रतिकार तो पूरे समय विकेन्द्रित तौर पर स्थानिक तौर पर ही हो रहा था। सार्वदेशिक स्तर पर एक समय आचार्य चाणक्य ने देश के अधिकाँश भूभाग के स्वामियों को जोड़कर एक मोर्चे के नाते खड़ा किया था। यवन पराजित तो हुए ही पर बाद मे लगभग 900 वर्ष कमोवेश शान्ति भारत में बनी रही।

1600 से यूरोपीय मानव टिड्डी दल भारत की समृद्धि को चरने आ पहुँचा था। 1665 के लगभग ईस्ट इंडिया कंपनी को ब्रिटिश सरकार से भी समर्थन प्राप्त हुआ था। 1760 के बाद गति और तीखापन बढ़ा। पहले लूट प्रेरणा थी, बाद मे खुला मैदान का उन्हें लोभ हुआ कब्जा करने का। 1750 के बाद की कहानी लूट, आर्थिक शोषण और सत्ता पर कब्जा करने के कपट की ही है। इस्लामी हमलों में बाह्य स्तर पर ज्यादा क्षति हुई, भारत के अन्तः स्थल को वे आक्रमण हिला नहीं पाये थे। पर अंग्रेजी औपनिवेशिक काल में आत्मविस्मृति का दौर चलाया गया। मिल, मैकाले, विल्बर फोर्स, मैक्स वैबर, काल्डवेल, मेटक्लिफ आदि सैकड़ों लोग इस काम को अंजाम देने में लग गये। एकजुट प्रतिकार नही हो सका।

भाषा-भूषा, भोजन-भवन, भेषज-भजन इन स्तरों पर अनुकरण को आदर मिला। समाज मे परिवार व्यवस्था, कारीगरी व्यवस्था, आयात-निर्यात व्यवस्था, शिक्षा-संस्कार व्यवस्था ज्ञान और टेक्नोलॉजी का देशज पक्ष आदि, सभी को उजाड़कर अपने लिये अनुकूल बनाने की आंधी चलने लगी।